

ISSN: 2581-6675



Praxis International

Journal of Social Science and Literature

(A Multidisciplinary, Peer-reviewed & Open Access Journal)

Volume - 5 Issue - 5 May - 2022

Editor

Dr. Aasif Rashid Wani

Co-Editor

Dr. Touria Drid

Dr. Oytun Sözüdoğru

Dr. Pratyush Prashant

Kapil Kumar Gautam

Cover Page
[Download](#)



पत्रिकाओं में स्त्री-विमर्श की समस्याएँ, चुनौतियाँ और समाधान एक विश्लेषण



रजनीश कुमार अम्बेडकर

[Download](#) (Page No. 1-12)



भारत-चीन सम्बंध: हिंद-प्रशांत क्षेत्र की उभरती चुनौतियां के विभिन्न आयाम



डॉ. माया गुप्ता

[Download](#) (Page No. 13-16)



Challenges And Defence of women's Human Rights in Global politics



Dr. Pravita Tripathi

[Download](#) (Page No. 17-21)



Literary Travel as explored through *City of Djinns: A Year in Delhi* and *In an Antique Land*



Debarshi Ghosh

[Download](#) (Page No. 22-30)

Bangladesh: Factors and Implications of the Rise of Islamism

Shikha Kori

[Download](#) (Page No. 31-38)

21st Century Teaching Skills of Teachers and Learning Skills of Students

Runato A. Basañes, Christian Rodrigo A. Runtal

[Download](#) (Page No. 39-50)

बौद्ध धर्म और सामाजिक सद्भाव

सोनू

[Download](#) (Page No. 51-55)

टैगोर के दार्शनिक एवं शैक्षिक विचारों की वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिकता

डॉ. राकेश गौतम

[Download](#) (Page No. 56-60)

भक्ति कालीन साहित्य में जम्भाणी साहित्य के माध्यम से गुरु जम्भनाथ जी का सामाजिक अवदान

हेमा जोशी

[Download](#) (Page No. 61-65)

कामायनी : एक समीक्षात्मक अध्ययन

नीतिका

[Download](#) (Page No. 66-68)

बुन्देलखण्डी और संस्कृत भाषा का अन्तःसंबंध

मोहन अहिरवार

[Download](#) (Page No. 69-72)

योगवासिष्ठ में वर्णित दार्शनिक तत्त्वों का अध्ययन

महेन्द्र कुमार शर्मा, प्रो. गणेश शंकर

[Download](#) (Page No. 73-77)

योगवासिष्ठ में वर्णित दार्शनिक तत्त्वों का अध्ययन

महेश्वर कुमार शर्मा¹, प्रो. नमेश शंकर²

¹शोध छात्र, योग शिक्षा विभाग, डॉ. हरीमिह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

ई-मेल: mahendrasharma76231@gmail.com

²विभागाध्यक्ष, योग शिक्षा विभाग, डॉ. हरीमिह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सारांश

जीवन के अस्तित्व के आधार को जानने के लिए सर्वाधिक भूमिका दर्शन की होती है। दर्शन के अभाव जीवन दिशा हीन होकर बहने लगता है। ऐसे में जीवन दुःखों व कष्टों से घिरा रहता है। दर्शन के क्षेत्र में भारत सदैव सर्वश्रेष्ठ व सर्वोपरि रहा है तथा जगत् को भी मार्ग प्रदान करता रहा है। वर्तमान समय में जगत् भारत की ओर आशा की दृष्टि से देख रहा है। दर्शन ने भारत को ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व को भी विशुद्ध दृष्टि प्रदान कर कल्याण का मार्ग दिखाया है। वेद के मन्त्र दृष्टा ऋषियों द्वारा रचित निश्चल सूक्तियाँ, बुद्धत्व से युक्त साधकों का विलक्षणता से युक्त मनोवैज्ञानिक विवेक्षण उपनिषदों के वे महान सन्देश जो पूर्ण निर्भय कर देने वाले हैं तथा भगवान शंकराचार्य द्वारा वर्णित तत्त्वों की स्पष्टता के संग विमुग्धकारी व विस्मय दर्शन- ये सब सांस्कृतिक एवं वास्तविक दृष्टि से बहुत ही शिक्षाप्रद तथा रोचक हैं। कुद्येक विद्वान न दर्शन की विलक्षणता की तुलना पश्चिम के दार्शनिक कांट, प्लेटो, अरस्तु व हिगल के दर्शन से करते हैं लेकिन भारतीय दर्शनों को निष्पक्ष भाव व वैज्ञानिकता युक्त दृष्टि से देखें तो ये दर्शन मनुष्य को धृष्ट, हेय तथा सभी समस्याओं से मुक्त करने का उपाय बतलाते हैं तथा भारतीय दर्शन की प्राचीनता को लेकर इनको हेय की दृष्टि से ना देखें। भारतीय दर्शनों का यथार्थ भाव सहित आंग्ल भाषा में अनुवाद नहीं हो पाये तब भी इनकी उपयोगिता कम नहीं हो जाती। भारत की प्रबुद्धता को भारत के दर्शन प्रकट करते हैं तथा पश्चिम का दर्शन जड़ता पर खड़ा है। जबकि पूर्व का दर्शन सनातन सत्य पर आधारित है जो सदैव तर्क-वितर्क की बाढ़ से गुजरते हुये भी खण्डन से मुक्त है।

दर्शन की यथार्थता को जानने व समझने के लिए भारत की धरा पर वेद, उपनिषद्, नौ दर्शन, गीता, रामायण व महाभारत जैसे ग्रन्थ उपलब्ध हैं। यह जानना आवश्यक है कि ऋषियों के उपदेश व आम वचन जो भी रहे हो, जरूरी नहीं कि वे सभी आम विचार हर समय में पूर्णतः प्रासंगिक हो वरन् आधुनिक समय में असन्तुलित हो रही परिस्थितियों से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता तथा इन सभी परिस्थितियों से मुक्ति पाने के लिए दर्शन ही उत्तम विचारों द्वारा हमारा मार्ग प्रशस्त करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। दर्शन के मूल्य व महत्व को गा-बजाकर सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है सत्य यह है कि दर्शन मनुष्य के जीवन से जुड़ी बहुत सी मार्मिक समस्याओं का समाधान प्रदान करने में पूर्णरूपेण सर्वसमर्थ है।

कीज-शब्द: दर्शन, मूल्य, जीवन, मुक्ति, सांस्कृतिक, शिक्षा।

“दृश इत्यास्मात् धातोः ल्युट् प्रत्यये।”¹

सति दर्शन शब्दः निष्पद्यते।¹

दर्शन शब्द पाणिनीय व्याकरण के अनुसार 'दृशिर प्रेक्षणे' (दृश) धातु ल्युट् प्रत्यय लगने से सम्पन्न हुआ है।² जिसका अर्थ है- दर्शन करना, देखना या साम्बन्ध सत्ता का साक्षात् होना।

“दृश्यतेऽनेन इति दर्शनम्”²

अर्थात् जिसके माध्यम से देखा जाए परन्तु सामान्य रूप से मन में एक प्रश्न आता है कि 'क्या देखा जाए?' - 'मैं कौन हूँ?' मेरी उत्पत्ति कहाँ से हुई?, क्यों हुई? ये चारों ओर क्या है?, क्यों है?, बन्धन क्या है?, मुक्ति क्या है?, सृष्टि को उत्पन्न करने वाला सृष्टा कौन? दर्शन इस तरह के यथार्थ प्रश्नों के समाधान प्रदान करता है। स्व की पूर्णानुभूति, सम्यक् दर्शन व एकात्मता जैसे शब्द दर्शन के इसी अभिप्राय को दर्शाते हैं।

संसार के सभी जीवों में मनुष्य विवेकवान होने के कारण वह समस्त प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ है। मनुष्य विवेक प्रधान होने की वजह से जगत की वस्तुओं को देख व उनके सत्य स्वरूप को समझने का प्रयास करता रहा है। मानव की प्रज्ञा ही उसको विभिन्न प्रश्नों का समाधान खोजने के लिए विवश करती रही है।

योगवासिष्ठ में दार्शनिक तत्त्व

भारतीय साहित्य में वर्णित सभी दार्शनिक विचार अपने 'वैविध्य विशेष' होने के कारण सदैव चर्चा में रहते हैं। परा तथा अपरा के विचारों और श्रेय तथा श्रेय की समस्त जानकारीयों को लेकर निःश्रेयस व अभ्युदय को प्राप्त कराने की विभिन्न साधना प्रणालियों से हमारे समस्त वागद्वय मानव जीवन को उत्कर्ष बनाने के लिए प्रयासरत है। संसार का कल्याण चाहने वाली आर्य संस्कृति वैश्विक धरातल पर स्वयं का गौरवमय स्थान रखती है। इस प्रकार की संस्कृति को गहनता से समझने के लिए व्यष्टि से लेकर परमैष्टि तक के प्रधान तत्त्वों को जानना नितान्त आवश्यक है। मनुष्य को

स्वयं व जगत के विभिन्न तत्त्वों के बारे में जो भी समझ है उसे विकसित करने में उसे सहस्रों वर्ष बीत गये हैं। इस वसुधा पर मनुष्य मन की सीमाओं से परे कुछ और भी है जिसको जानने के लिए मनुष्य के अन्दर अनन्त सम्भावनायें हैं। इस भूमि पर इस तरह के अनेक ज्ञान पिपासु जन्म लिये हैं जो ब्रह्माण्ड के रहस्यों को स्वयं के भीतर की शक्तियों द्वारा जान गये। ऐसे ही महापुरुषों को संसार सदैव स्मरण में रखता है।⁴

भारत भूमि पर जन्मे ऋषियों ने जीवन से जुड़े तत्त्वों को सत्यरूप में जानकर 'स्व' के संकीर्ण भावों से मुक्त होकर अपने वास्तविक विराट भाव से युक्त होकर संसार को कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है वही मुक्ति का साधन बना है तथा यही भाव वैश्विक धरातल पर हमारे दर्शन को गौरवमय स्थान प्रदान करते हैं। भारतीय साहित्य में जीव, जगत व ब्रह्म की धारणाओं पर हमारे महापुरुषों द्वारा अपने विशुद्ध चिन्तन द्वारा जगत को यथार्थ दृष्टि प्रदान की है। 'वामिष्ठ रामायण' में जीव, जगत व ब्रह्म के विषय में स्पष्ट दृष्टि प्राप्त होती है।

योगवासिष्ठ का मत

“वावद्विलीनं न मनो न तावद्वासनाशब्दः।

न क्षीणा वासना वावञ्चितं तावन्न शाम्यति।”⁵

वासना बिना मन के क्षीण हुये नष्ट नहीं होती तथा बिना वासना के क्षीण हुये मन भी शान्त नहीं हो सकता।

मन जब तक बाहरी विषयों की ओर यात्रा कर रहा है तब तक उसके भीतर काम क्रोधादि खड्डिपु उत्पन्न होते रहेंगे तथा जैसे ही मन अन्दर की ओर यात्रा करने लगता है वैसे ही मन वासनाओं से मुक्त होता जायेगा और जब मन को बाहरी पोषण की सामग्री प्राप्त होना बन्द हो जायेगी तब वह स्वतः शान्त होना शुरू हो जायेगा। जैसे-जैसे मन शान्त स्थिति को प्राप्त होता जायेगा वैसे ही वह निग्रह होता रहेगा। इस कारण तत्त्वज्ञान के जिज्ञासु को नित्य मनोनिग्रह का प्रयत्न करना चाहिए।

“वावन्न तत्त्वविज्ञानं तावच्चित्तमः कुतः।

वावन्न चित्तोपशमो न तावत्तत्त्ववेदनम्।”⁶

जब तक तत्त्वज्ञान नहीं होता तब तक चित्त शान्त नहीं होता तथा चित्त का अशान्त होना ही तत्त्वज्ञान को प्राप्त करने में बाधक है।

आत्मज्ञान अर्थात् 'मैं ब्रह्म हूँ' और 'जगत् मिथ्या' है। इस प्रकार का निश्चयबोधक ज्ञान जब स्थिरता को धारण करने लगे, तब तुच्छ विषयों का निरोध शुरू हो जाता है। जिस तरह प्रज्वलित अग्नि में घी नहीं डालने से वह शान्त हो जाती है उसी प्रकार आत्म ज्ञान द्वारा बाह्य विषय भी क्षीण होने लगते हैं। जिससे मन में वृत्ति रूपी ज्वाला स्वतः शान्त हो जाती है। इसके विपरीत मन के क्षीण नहीं होने के कारण विचार आदि विषय प्रसन्न होने लगते हैं। जिसके कारण 'ब्रह्म सत्य - जगत् मिथ्या' का निश्चय अत्यन्त कठिन जान पड़ता है।

"वाचनं वासनानासस्तावत्सत्त्वामयः कुतः।

वाचनं तत्त्वसंश्रितिनं वाचद्वारासनाक्षयः॥" 7

जब तक वासना नष्ट नहीं हो जाती तब तक ज्ञानोदय नहीं होगा तथा वासना क्षय के अभाव में तत्त्वज्ञान का भी अभाव रहता है।

जीव

सामान्यतः प्राण व जीव को एक ही अर्थ में लिया जाता है आत्मा व शरीर की संयुक्तता का नाम ही जीव है। उसे ही ईश्वर का अंश या प्रतिबिम्ब कहा जा सकता है। 'वर्योपाधिरयं जीवः' मायिक परिणाम में जड़ व सूक्ष्म शरीर सहित आत्मा ही को जीव कहते हैं। आदि शंकराचार्य के मतानुसार मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ, अहंकार व देह की उपाधियों से घिरा हुआ तथा पृथक् किया गया आत्मा ही जीव रूप है।⁸

"जीवनाज्ञेतनाजीवो जीव इत्येव कम्बते।" 9

"चेतनं राम संसारो जीव एव पशुः स्मृतः।" 10

ब्रह्म ही चेतना द्वारा सभी को धारण करने के कारण जीव कहलाता है। इस संसार में चेतनता द्वारा युक्त जो पशु, प्राणी व जीव रूपी पदार्थ है वे ही जीव हैं।

जगत्

मानव हिन्दी शब्दकोशानुसार- "चेतन, जागता हुआ, जो घूमता व फिरता हो, पृथ्वी का वह अंश या हिस्सा जिसमें जीव या प्राणी क्रिया करते रहते हो, चेतना से युक्त सृष्टि, किसी विशेष स्थान या कार्यक्षेत्र पर रहने वाले जीवों व पिंडों आदि का समूह या वर्ग, जैसे सौर व नारी जगत्। धरा के निवासी, दुनिया, संसार व जगत्।"¹¹ जो यह दृश्य के रूप में अहं व जगत् आदि पदार्थ स्थाई रूप से दिखाई पड़ते हैं, यह केवल भ्रम मात्र है, इनको असत्य ही जानना चाहिए। अनुभव में आये हुये कल्पनामय जगत् की तरह, मृगतृष्णामय जल की तरह, यह संसार सत्य सा महसूस होते हुए भी असत्य व अस्थायी है।¹²

"मावेवं स्वप्नवद्भ्रान्तिर्निष्कारितचक्रिका।

मनोराज्यविभासोऽपि एतन्मूर्त सुन्दरी॥" 13

अर्थात् यह सम्पूर्ण सृष्टि मायामय है, स्वप्न की भांति क्षणिक व भ्रमयुक्त है, मिथ्या भाव द्वारा रचे चक्र की तरह, मन रूपी राज्य की तरह चंचल है, जल में उत्पन्न भँवर की भांति सुन्दर दिखाई देने वाला है।

अतः यह जगत् न ही सत् है तथा न ही असत् है यह तो सत् व असत् दोनों ही रूपों में भ्रामता मात्र है यह जगत् वास्तविकता में सत्य ना होकर भ्रम मात्र है, अज्ञान के कारण यह जगत् अनुभव में आता है।

ब्रह्म

आचार्य शंकर के मतानुसार अद्वैत वेदान्त में वर्णित ब्रह्म आकाश के समान सर्वव्यापी सत्ता रूप में है, जो ब्रह्माण्ड के प्रत्येक कण में व्याप्त है। वह परम व्यापक, अशरीरी, ब्रह्मानन्द¹⁴, आनन्द¹⁵, चेतन्य-असंग¹⁶, अविनाशी, निराकार, प्रज्ञानधन¹⁷, अपरिवर्तनीय, अनादि, निर्विशेष, विकारमुक्त, भेदबुद्धि से मुक्त तथा अक्षय अवस्था से युक्त है।

योगवासिष्ठानुसार ब्रह्म की महत्ता स्वयं मिद्ध है वह न तो वह है, न ही यह है¹⁸, न वह एक - न ही वह अनेक है¹⁹, न ही शून्य न ही अशून्य²⁰, न ही विद्या न ही अविद्या²¹, न तम न ही प्रकाश²², तथा न जड़ न चेतन²³। वह तो सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, नित्य, सम तथा सच्चिदानन्द धन है। ब्रह्म स्वयं निर्विकार, निष्क्रिय एवं शान्त है।

माया

माया शब्द को लेकर प्रायः विभिन्न अर्थ लगाये जाते हैं जैसे- छल, कपट, जादू, इन्द्रजाल, धोखा, धूर्तता, मिथ्या धारणा, दाँव, युक्ति, चाल आदि।²⁴ अत्यधिक उत्कृष्ट या प्रखर बुद्धि प्रज्ञा, ऐसी कोई रचना, रूप या कृति जिससे मनुष्य धोखे या भ्रम में पड़ते हों। छलपूर्ण तथ्य या बात। जैसे इन्द्रजाल या जादूगिरी। वेदान्त में वर्णित वो ईश्वरीय शक्ति जिससे नाम रूप से युक्ति दृश्यमान जगत् की रचना हुई है वह माया है।²⁵

योगवासिष्ठानुसार- वास्तविकता में तो एकमात्र शुद्ध आत्मतत्त्व ही पदार्थ है अन्य कुछ भी नहीं है। वस्तुतः किसी तत्त्व के उपस्थित न होते हुए भी आत्मा के अलावा उस तत्त्व का भान होने लगे, वही स्थिति माया है। इसे माया इसी वजह से बताया गया है कि इसकी उपलब्धि नहीं होने पर भी यह विद्यमान सी प्रतीत होती है। इस माया अर्थात् अविद्या के अनन्त प्रकार है और यह विभिन्न तरह के भ्रमों की उत्पादक है। जो सत्ता को असत्ता तथा सद्मत्ता (सत् व असत्) प्रकट करने में समर्थ हो वही माया है।²⁶

मोक्ष

मन ही मनुष्य के बन्धन व मुक्ति का कारण है। विषयों में आसक्त हुआ मन बन्धन प्रदान करता है तथा विषयों से अनासक्त मन मुक्ति को आमन्त्रित करता है।²⁷ सभी कुछ 'स्वात्म' ब्रह्म ही है। इसको संकल्प के द्वारा दृढ़ करके मन को पूर्णतः मुक्त किया जा सकता है।

विषयों के बारे में संकल्प करना ही बन्धन का कारण है 'मैं यह हूँ' इस तरह का संकल्प विनाश करने वाले बन्धन को प्रदान करता है और 'मैं यह नहीं हूँ' ऐसा संकल्प मुक्ति को प्राप्त कराता है।²⁸

निष्कर्ष

स्वयं के प्रति, जगत के प्रति तथा सृष्टिकर्ता के प्रति, सभी के मूल स्रोत ब्रह्म के प्रति यथार्थ दृष्टि के स्पष्ट हो जाने से मनुष्य माया के बन्धन से सदैव मुक्त रह सकता है तथा वह सुख-दुःख के चक्र में नहीं फंसेगा। तत्त्वज्ञान के अभाव में मनुष्य व्यर्थ व भयभीत कर देने वाले चिन्तन में डूबा रहता है और वह कामनाओं के दावानल में उभर नहीं पाता। इस कारण मनुष्य को स्वयं जगत व ब्रह्म के यथार्थ स्वरूप को विशुद्ध रूप से जानकर अपने जीवन को जीना चाहिए। इसी तत्त्वज्ञ अवस्था से युक्त होकर समाज में यथार्थ दृष्टि को प्रदान करने के लिए कार्य करना चाहिए। जिससे समाज से भ्रम, भय व असत्य का प्रभाव नष्ट होकर यथार्थ, निर्भयता व सत्यता का प्रभाव व्यवहार में प्रकट होने लगेगा। यही मनुष्य समाज के लिए आनन्द प्रदान करने का अक्षय स्रोत है।

सन्दर्भ

1. शर्मा, एम. 'भारतीय दर्शनों का परिचयात्मक अध्ययन'. डॉक्टर हरीमिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, 2019. पृ.1
2. आचार्य, एम.एम. सांख्य एवं योग दर्शन, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि, मथुरा, 2011. पृ.5
3. पाण्डेय, के.बी. वसिष्ठ रामायण में विरूपित जीवन मूल्यों की मीमांसा. हंसा प्रकाशन, जयपुर, 2009. पृ.38
4. पटेल, एन.बी.सी. ज्ञानमीमांसा तत्व मीमांसा एवं मूल्य मीमांसा के सन्दर्भ में योगवासिष्ठ रामायण का अभ्यास. सौराष्ट्र वि. राजकोट, 2015. पृ.157
5. योगवासिष्ठ-5.92.11
6. योगवासिष्ठ-5.92.12
7. योगवासिष्ठ-5.92.13
8. गैलोरा, बी., भारतीय दर्शन, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009. पृ.364

9. शास्त्री. एम.पी. योगवासिष्ठ : महारामायणम् भाग-III. चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन. वाराणसी. 2019. पृ.2827
10. शास्त्री. एम.पी. योगवासिष्ठ : महारामायणम् भाग-IV. चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन. वाराणसी. 2019. पृ.240
11. वर्मा. आर. मानक हिन्दी कोष भाग-2. हिन्दी साहित्य सम्मेलन. प्रयाग. 1992. पृ.321
12. शास्त्री. एम.पी. योगवासिष्ठ : महारामायणम् भाग-V. चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन. वाराणसी. 2019. पृ.747-748
13. योगवासिष्ठ-4.47.41
14. देसाई. पी.. ब्रह्मसूत्रशाङ्कर भाष्यम् सरस्वती पुस्तक भण्डार अहमदाबाद. 1991. श्लोक सं. 1.1.4
15. शंकराचार्य. छान्दोग्योपनिषद्. गीताप्रेस गोरखपुर. सं. 2068. श्लोक सं. 8.12.1
16. शास्त्री. पी.जे. उपनिषत्संग्रह : तैत्तिरीयोपनिषद्. मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स. दिल्ली. 2006. श्लोक सं. 2.9
17. शंकराचार्य. बृहदारण्यकोपनिषद्. गीताप्रेस. गोरखपुर. सं.2068. श्लोक सं. 4.3.15
18. शास्त्री. एम.पी. योगवासिष्ठ : महारामायणम् भाग-I. चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन. वाराणसी. 2019. पृ.1293
19. वही. पृ.1570
20. वही. पृ.1636
21. वही. पृ.1444
22. वही. पृ.257
23. वही. पृ.615
24. आप्टे. वी.एस.. संस्कृति हिन्दी कोश. रचना प्रकाशन. जयपुर. 2002. पृ.795
25. वर्मा. आर. मानक हिन्दी कोष भाग-4. हिन्दी साहित्य सम्मेलन. प्रयाग. 1991. पृ.344
26. शास्त्री. एम.पी. योगवासिष्ठ : महारामायणम् भाग-II. चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन. वाराणसी. 2019. पृ.285
27. शंकरानन्द. एस. श्री पंचदशी दीपप्रकरण भाग-4. सेन्ट्रल चिन्मय मिशन ट्रस्ट. मुम्बई. 2011. पृ.92
28. शास्त्री. एम.पी. योगवासिष्ठ : महारामायणम् भाग-III. चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन. वाराणसी. 2019. पृ.1868